International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 544-547

मध्य गंगा घाटी सांस्कृतिक समन्वय : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

धीरेन्द्र सिंह
शोध छात्र, प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

अध्ययन क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) एक भौगोलिक इकाई नहीं है। यह एक विचारधारा, एक जीवन शैली, एक चिन्तन–परम्परा, एक उदात्त भावना, विराट की एक अनुभूति है। वह संस्कृतियों का संगम, वैचारिक उर्जा का अक्षय होने के साथ–साथ गंगा–जमुनी संस्कृति का अनूठा प्रतीक भी है। इसलिए इसे भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता का पालना कहा जाता है।

मध्य गंगा घाटी (240 30' उत्तरी अक्षांश से और 270 50' उत्तरी अक्षांश और 810 47' पूर्वी देशान्तर से 870 50' पूर्वी देशान्तरों) के मध्य स्थित है। इसके उत्तर में नेपाल की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा, दक्षिण में विन्ध्याचल एवं छोटा नागपुर पठार है। लगभग 144, 409 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैले मध्य गंगा घाटी के अन्तर्गत पूर्वी उत्तर प्रदेश और सम्पूर्ण बिहार प्रान्त सम्मिलित है। इसके अन्तर्गत उत्तर प्रदेश का पूर्वी एक तिहाई और उत्तरी आधा बिहार सम्मिलित है। भौगोलिक दृष्टि से गंगा का मध्यवर्ती घाटी उत्तर भारत के विशाल गंगा घाटी का ही मध्यवर्ती भाग है, जिसकी पश्चिमी सीमा गंगा के उत्तरी भाग से आरम्भ होती है। इस क्षेत्र की लम्बाई लगभग 600 किलोमीटर पूरब से पश्चिम तथा चौड़ाई 330 किलोमीटर उत्तर से दक्षिण की ओर है। यह आयताकार रूप वाला क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) अपनी अपरिमित मानवीय, आर्थिक और सांस्कृतिक महत्ता के कारण भारत का हृदय–स्थल बन गया है।

प्रशासनिक दृष्टि से इस प्रदेश में पूर्वी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर और वाराणसी संभाग (वाराणसी जिले की चकिया तहसील और मिर्जापुर जिले के अधिकांश भाग को छोड़कर), गोण्डा जिले की बलरामपुर और उतरौला तहसील, फैज़ाबाद जिले की टाण्डा और अकबरपुर तहसील, प्रतापगढ़ जिले की पट्टी तहसील, सुल्तानपुर जिले की सुल्तानपुर और कादीपुर तहसील, इलाहाबाद जिले की फूलपुर, हण्डिया और करछना तहसीलें तथा बिहार के तिरहुत, भागलपुर और पटना संभाग सम्मिलित किए जाते हैं। यह प्रदेश गंगा के दोनों ओर नेपाल से विन्ध्याचल एवं नागपुर के पठार की उत्तरी सीमा तक विस्तृत है।

भूवैज्ञानिक दृष्टि से मध्य गंगा घाटी उत्तरी भारत के गंगा घाटी के अन्तर्गत आता है। इस विशाल निर्माण प्रक्रिया के सम्बन्ध में भू–वैज्ञानिकों में मतैक्य नहीं है। प्रायद्वीप और शिवालिक गिरिपदों के बीच में यह घाटी भूमि की पपड़ी के अवनगमन को सूचित करती है, जो प्रतिनूतन काल (प्लीस्टोसीन) और आधुनिक युगों में बने हुए अवसादों द्वारा पाट दिया गया है। यह बालू और मिट्टी के तहों का बना हुआ है।

खान, नवानी एवं श्रीवास्तव के द्वारा वाराणसी, मिर्जापुर एवं गाजीपुर के भ्वाकृतिक मूल्यांकन के दौरान यह स्पष्ट हुआ है कि इस क्षेत्र में प्राचीनतम एवं नवीनतम अलूबियम का जमाव बेसिन क्षेत्र तथा बाढ़ के मैदानी परिवेश में हुआ है। उनका कहना है कि गंगा नदी के क्वार्टनरी युग के समय जलवायु विवर्तनिक परिवर्तनों के कारण अलूबियम सतहों का निर्माण हुआ है। उन्होंने गंगा घाटी में मृत्तिका सिल्ट एवं बालू के जमाव का उल्लेख किया है। जिसके नीचे अधिक गहराई में विन्ध्यन श्रेणी के शैलों के ऊपर विषम विन्यास तल का निर्माण हुआ है।

भूगर्भ शास्त्र की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) में खनिज और अयस्कों का अभाव है। केवल कुछ स्थानों से जहाँ छार–युक्त भूमि है, शोरा प्राप्त होता है। दोआब तथा निचले भू–भाग को छोड़कर उपर्युक्त वर्णित घाटी के प्रायः प्रत्येक भाग में चूनाश्म संगुटिवाश्म (लाइम स्टोन कांग्लोमरेट) या कंकड़ मिलता है। यह कंकड़ कहीं–कहीं तो भूमि के सतह पर ही और कहीं–कही काफी गहराई में मिलता है।

उत्तरी मध्य गंगा घाटी

गंगा–घाघरा दोआब घाटी का सबसे ऊँचा भूखण्ड है, और अधिकांश भू–भाग बाँगर क्षेत्र में पड़ती है। उल्लेखनीय है कि पूर्वी उत्तर प्रदेश के बलिया दोआब की खादर भूमि को छोड़कर मध्य गंगा घाटी की अधिकांश भूमि बंजर मिट्टी से निर्मित है। जिसमें पश्चिम से पूर्व की ओर ऊसर की एक पतली पट्टी सम्मिलित है । उपुर्यक्त वर्णित घाटी का यह भाग सबसे शुष्क है। जहाँ पर 100 से 200 से.मी. वर्षा होती है और 30 प्रतिशत से 60 प्रतिशत भूमि सिंचित है। अधिकांश भाग अवनाच्छादित है तथा जनसंख्या का घनत्व 420 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. से अधिक है।

दक्षिणी मध्य गंगा घाटी

यह गंगा एवं सोन नदियों के बीच का भूखण्ड है। अधिकांश भाग पर कृषि की जाती है। इसे कर्मनाशा नदी दो भागों में विभक्त करती है । पश्चिम की ओर वाराणसी का चकिया, चन्दौली मैदानी क्षेत्र मिलता है। जिसमें कर्मनाशा एवं चन्द्र प्रभा नदियों से निकाली गई नहरों से सिंचाई का प्राविधान है। मिर्जापुर इस क्षेत्र का मुख्य नगर है। कर्मनाशा के पूरब जो बिहार से शाहाबाद जिले में स्थित है। यह अधिक उपजाऊ क्षेत्र है, जहाँ धान (वोराइजा सटाइवा) की खेती अच्छी होती है।

अध्ययन क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) में मृदाओं की विशेषताएं सामान्यतः सर्वत्र समान है। किन्तु रासायनिक संरचना, रंग, निर्माण प्रक्रिया, जल धारण क्षमता, धरातलीय ढाल, नदी के संदर्भ में स्थिति आदि कारकों के आधार पर उनमें सूक्ष्म विविधताएं देखी जा सकती हैं

उत्तर प्रदेश के दक्षिणी पठारी भाग जिसमें वाराणसी जिले की चकिया तहसील, मिर्जापुर जिले का समस्त क्षेत्र, इलाहाबाद जिले की मेजा, करछना तथा बारा तहसील, कौशाम्बी जनपद और झांसी मंडल के लगभग समस्त जनपद का क्षेत्र, सम्मिलित है जो मध्य गंगाघाटी क्षेत्र के अन्तर्गत आते है। उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र के मध्य पाषाणोंपकरणों का निर्माण चर्ट तथा चल्सेडनी पर मुख्यतः किया गया है। इसके अतिरिक्त कार्नेलियन अगेट, जैस्पर, क्वार्टज और

क्वार्टजाइट पर भी इसका निर्माण मिलता है प्रमुख उपकरणों में कुंण्ठित तथा वक्र ब्लेड, छिद्रक, स्क्रैपर, बेधक, त्रिभुज, और चान्द्रिक आदि हैं। समस्त उत्तरी विन्ध्य क्षेत्र की मध्य पाषाण कालिन संस्कृति को समझने के लिए उत्खनित स्थलों का विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत किया जा सकता है। किन्तु इससे पहले उस कालक्रम पर थोड़ा प्रकाश डालना यथोचित रहेगा जब पहली बार मानव का पदार्पण मध्य सोन घाटी (विन्ध्य क्षेत्र) से मैदानी भागों में हुआ, जिसे पुरातत्वविद्ो एवं इतिहासकारों ने 'अनु:पुरापाषाणकाल' की संज्ञा से अविभूत किया।

इस संस्कृति के अवशेष उच्च पूर्वपाषाण काल और मध्य पाषाण काल के संक्रमणात्मक स्थिति का द्योतन करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इस काल के सांस्कृतिक अवशेषों को न तो उच्च पूर्व पाषाण काल में रखा जा सकता है और न ही मध्य पाषाण काल में। ये दोनों ही के मिले जुले रूप को दर्शाते हैं। इसीलिए पुरातत्वविद्ों नें इसे 'अनु:पुरापाषाणकाल' नाम दिया है। मध्य गंगा घाटी की इस प्राचीनतम संस्कृति5 के प्रमाण अभी तक कुल छः स्थलों – वाराणसी में गढ़वा, इलाहाबाद में कूढ़ा एवं अहिरी, प्रतापगढ़ में सुलेमान पर्वतपुर, मन्दाह तथा साल्हीपुर से प्राप्त हुए हैं। ये सभी स्थल धनुषाकार झीलों अथवा इन झीलों से निकलने वाली नदियों के तट पर स्थित हैं6। इस संस्कृति के उपकरण एक प्रकार की कड़ी मिट्टी वाले जमावों में मिलते हैं। इनका भू–तात्विक धरातल फाफामऊ, इलाहाबाद के नजदीक गंगा के अनुभाग के तृतीय स्तर से संम्बन्ति है जिसे बेलन नदी अनुभाग के चतुर्थ ग्रेवल से समीकृत किया जाता है।

विन्ध्य क्षेत्र से पाषाण कालीन मानव प्रस्तर–खण्ड लेकर आता था, यहीं पर उपकरण बनाता था और उससे आखेट करता था। विन्ध्य क्षेत्र में हुए जलवायु व परिवेश में परिवर्तन तथा तत्कालीन आबादी में वृद्धि मध्य गंगा घाटी में उनके आव्रजन का मुख्य कारण रहा होगा। इस संस्कृति के किसी भी स्थल का अभी तक उत्खनन नहीं हो सका है। इन स्थलों की सतह से जो उपकरण एकत्र किये गये हैं, वे सभी चर्ट पर निर्मित हैं तथा उन पर अत्यधिक काई लगी हुई है। उपकरण प्रकारों में समान्तरबद्ध काले ब्लेड, भूथडे ब्लेड, तक्षणी, नोंक, खुरचनी, अर्द्धचन्द्र आदि का उल्लेख किया जा सकता है।

इस संस्कृति के उपकरणों का निर्माण विभिन्न रंगों– काले, लाल, पीले, और सफेद चर्ट पत्थरों पर किया गया है। कुछ उपकरण चैल्सिडनी पर भी बने हुए प्राप्त हुए हैं। पूर्णतः निर्मित और प्रयुक्त उपकरणों के साथ–साथ कोर एवं फलक की उपस्थिति के आधार पर कहा जा सकता है कि इन उपकरणों का निर्माण व प्रयोंग इन्हीं स्थलों पर किया गया था क्योंकि गंगा के मैदान में इन पत्थरों का मूल स्रोत नहीं था। इसलिए कोर से तब तक ब्लेड निकाला गया जब तक वह अत्यन्त छोटे नहीं हो गये। पूर्णतः निर्मित उपकरणों में पुनर्गठित ब्लेड, भूथड़े ब्लेड, छिद्रक, ब्यूरिन, स्क्रेपर, और अर्द्धचन्द्र सम्मिलित हैं। उपकरणों के अतिरिक्त पाषाण पुरासामग्री में ब्लेड, फलक, कोर, पुनरूज्जनित फलक और चिप्स का उल्लेख किया जा सकता है। चूँकि ये उपकरण वर्तमान धरातल के ऊपर से प्राप्त हुए हैं, इसलिए उन पर अत्यधिक काई लगी हुई है तथा ये अधिकांशतः खण्डित अवस्था में हैं। इन उपकरणों से संबन्धित जमाव की मोटाई अधिक नहीं है। अस्तु प्रतीत होता है कि ये स्थल अस्थायी अथवा ऋतुनिष्ठ आवास के निमित्त ही प्रयुक्त किये गये थे। इन स्थलों से जैविक अवशेष भी नहीं उपलब्ध हुए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रातिनूतन काल के अंत और नूतन काल के प्रारम्भ में मानव जनसंख्या में वृद्धि और विन्ध्य क्षेत्र की शुष्क जलवायु, भोजन और पानी की कमी के कारण पाषाण युगीन मानव को गंगा और यमुना जैसी बड़ी नदियों को पार करके गंगा के मैदान में आना पड़ा, जिसके प्रमाण अनु:पुरापाषाण काल के ये स्थल प्रस्तुत करते हैं। प्रारम्भ में मानव का प्रवजन ऋतुनिष्ठ रहा होगा। किन्तु आगे चलकर गंगा के मैदान की वन–सम्पदा और झीलों एवं नदियों के हरे–भरे होने तथा यहाँ की वानस्पतिक एवं जैविक संम्पदा की प्राचुर्यता के प्रति आकर्षण एवं अनुकूलन के कारण मनुष्य यहाँ स्थायी रूप से बसने के लिए उन्मुख हुआ। यही कारण है कि अनु:पुरापाषाण काल में हमें स्थायी आवास के प्रमाण नहीं मिलते हैं। मध्य गंगा घाटी की इस प्राचीनतम संस्कृति ने पाषाण कालीन मानव के ऋतुनिष्ठ प्रव्रजन का भारतमें प्राचीनतम् प्रमाण प्रस्तुत किया। विन्ध्य क्षेत्र की सूखे की विभीषिका से बचने के लिए मनुष्य जीविका की तलाश में नदी घाटियों को पार करता हुआ उत्तर की तरफ आया, संभवतः उसका इस क्षेत्र में आगमन नितांत अल्पकालिक होता था। अनुकूल मौसम में वह पुनः अपने मूल क्षेत्र में लौट जाया करता था। इस काल के उपकरणों के अध्ययन से इस बात का पता चलता है कि इस संस्कृति से संबन्धित गंगाघाटी के उपकरण विन्ध्य क्षेत्र के उपकरणों की अपेक्षा छोटे हैं। उपकरणों की यह आकारगत न्यूनता मध्य गंगा घाटी में प्रस्तर पिण्डों की अनुपलब्धता के कारण थी। मानव ने इसकी महत्ता को ध्यान में रखकर तब तक उपकरण निर्माण किया जब तक ये अत्यन्त छोटे नहीं हो गये।

मिर्जापुर जिले का महत्वपूर्ण मध्य पाषाणिक स्थल बघहीखोर है जो मोरहना पहाड़ के पास ही अवस्थित है। इस स्थल का उत्खनन डॉ0 राधाकान्त वर्मा ने कराया यहाँ पर शिलाश्रय संख्या 1 में 12ग6 फीट की एक खन्ती डाली गयी जिसमें 55 से0 मी0 मोटा जमाव (मध्य पाषाणिक) प्रकाश में आया जिसे चार स्तरों में विभाजित किया गया है। यहाँ पर विभिन्न स्तरों से सांस्कृतिक अवशेष मिले हैं यद्यपि वे काफी कुछ मोरहना पहाड़ के अवशेषों से साम्य रखते है। फिर भी इनमें एक निश्चित विकासात्मक क्रम परिलक्षित होता है। यहाँ का सबसे निम्नतम चतुर्थ स्तर है जिसकी मोटाई 3.5 इंच है। यह पत्थर की चिप्पियों, राख तथा राख मिश्रित मिट्टी से निर्मित थी। इस जमाव से चर्ट के बने अज्यामितिय प्रकार के लघुपाषाणोंपकरण मिले है। फलकों पर बने उपकरणों की संख्या अधिक है। इस स्तर से मिट्टी के बने बर्तनों का अभाव है। प्रमुख उपकरण प्रकारों में ब्लेड, फलक, बेधक, चान्द्रिक तथा कोर प्रमुख है। तृतीय स्तर महीन बलुई मिट्टी से निर्मित है इसकी औसत मोटाई 7.5 से0 मी0 है। इस स्तर से समानान्तर पार्श्व वाले तथा कुण्ठित ब्लेड, चान्द्रिक, बेधक और क्रोड आदि पुरावशेष मिले हैं। द्वितीय स्तर से ज्यामितीय और अज्यामितीय दोनो तरह के उपकरण प्राप्त हुए। ये उपकरण यद्यपि प्रकार में पुराने ही हैं लेकिन इनका आकार अपेक्षाकृत छोटा है। प्रथम स्तर की मोटाई 1 इंच थी, यह नियमित सख्त गहरे रंग का जमाव था इस स्तर से जो उपकरण प्राप्त हुए हैं वे आकार में बहुत छोटे हैं। और अधिकांशतः लघुपाषाणोपकरण चाल्सेडनी पर निर्मित हैं। इस स्तर से मिट्टी के बर्तन के नमूने अपेक्षाकृत अधिक मिले हैं। सबसे उपर लौहे के बाण और लोहे का एक टुकड़ा भी मिला है। मिट्टी के बर्तनों के नमूने तृतीय और द्वितीय स्तर से मिले है। जिसमें द्वितीय स्तर पर मिले मृद्भण्ड के टुकेड़े चाक पर बनाये गये प्रतीत होते हैं।

मिर्जापुर जिले में भैसोर के ही पास तीसरा उत्खनित स्थल लेखहिया है। इस स्थल का उत्खनन इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के प्रोफेसर वी0 डी0 मिश्र ने स्व0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन में कराया यहाँ पर स्थित पाँच शिलाश्रयों में से प्रथम दो को उत्खनन के लिए चुना गया। शिलाश्रय 1 में 6.20ग3.10 मीटर की खन्ती डाली गयी जिसमें 48 से0 मी0 मोटा सांस्कृतिक जमाव प्राप्त हुआ जिसे चार स्तरों में

विभाजित किया गया। शिलाश्रय 2 के खुले क्षेत्र में 7ग3 मीटर आकार की खन्ती डाली अयी जिसमें 1.10 मीटर मोटा सांस्कृतिक जमाव प्रकाश में आया जिसे 9 स्तरों में विभाजित किया गया है। इन स्तरों से प्राप्त पाषाण उपकरण ज्यामितीय और अज्यामितीय दोनों हैं। मृद्भांड के अवशेष भी प्राप्त हुए है। इस प्रकार उपरोक्त विवरण प्रकार को देखते हुए यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि विन्ध्य क्षेत्र में लघुपाषाण उपकरणों का एक विकासात्मक क्रम परिलक्षित होता है। उपकरण उत्तरोत्तर छोटे होते जाते हैं तथा इनमें तीक्ष्णता आती जाती है। यद्यपि प्रथम दो चरणों से मिट्टी के पात्र नहीं मिलते है लेकिन कालान्तर में पूर्व नव पाषाणिक स्तर के लोगों के सम्पर्क में आने के फलस्वरूप मध्य पाषाणिक संस्कृति के लोगों ने हाँथ से बने मृद्भाण्डों का उपयोग प्रारम्भ कर दिया[17]।

लेखहिया के शिलाश्रय संख्या 1 से मध्य पाषाणिक लघुपाषाणोंपकरणों के अतिरिक्त 17 मानव कंकाल प्राप्त हुए हैं। जिनमें से कुछ सुरक्षित तथा कुछ क्षत–विक्षत स्थिति में हैं18। इनमें अधिकांश के विस्तीर्ण शवाधान हैं। कंकाल 2 और 12 को छोड़कर शेष सभी के सिर पश्चिम की ओर तथा पैर पूर्व की ओर कब्र में चित्त लिटाया गया था। कंकाल संख्या 2 का सिर दक्षिण की ओर तथा कंकाल संख्या 12 का सिर उत्तर की ओर था। अधिकांश कंकाल वयस्कों के तथा एक बच्चे का है। 13 कंकालों की अबतक पहचान की जा चुकी है जिनमें 10 पुरूष और 3 स्त्री के हैं। कुछ कंकालों जिनमें 2 और 5 के साथ अन्त्येष्टि सामग्री के भी प्रमाण मिले हैं। जिसमें पशुओं की हड्डियाँ घोंघा और हिरण की सींग मिली हैं। सभी नर कंकालों के साथ बड़ी संख्या में पूर्णनिर्मित तथा अर्द्धनिर्मित पाषाणोंपकरण मिले हैं।

उत्तरी विन्ध्यक्षेत्र का अगला उत्खनित मध्यपाषाणिक स्थल चोपनीमाण्डों है। जो इलाहाबाद जिले में नगर से 77 कि0 मी0 दक्षिण–पूर्व की दिशा में बूढ़ी बेलन नदी के बायें तट पर स्थित है। इस पुरास्थल को खोजने का श्रेय इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के प्रोफेसर वी0 डी0 मिश्र को है21। इसका उत्खनन 1978–82 ई0 में श्री वी0 डी0 मिश्र ने प्रो0 जी0 आर0 शर्मा के निर्देशन में कराया यह विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ एक मध्य पाषाणिक पुरास्थल है जिसका क्षेत्रफल 15000 वर्ग मीटर है। इस स्थल का उत्खनन विस्तृत पैमाने पर क्षैतिज विधि से किया गया। उत्खनन के लिए 5ग5 मीटर की 21 खन्तियाँ लगाई गयी जिसका उत्खनन 35–30 से0 मी0 तक किया गया। कुछ के उत्खनन को 60–80 से0 मी0 की गहराई तक ले जाया गया। चोपनीमाण्डों के उत्खनन के फलस्वरूप जो सामग्रीयाँ प्राप्त हुयी है उसे तीन सांस्कृतिक उपकालों में विभाजित किया गया है– 1. अनःपुरापाषाण काल 2. अ. आरम्भिक मध्यपाषाण काल, ब. प्रारम्भिक मध्यपाषाण काल तथा 3. विकसित मध्य पाषाण काल22।

अनःपुरापाषाण काल चोपनीमाण्डो के दसवें और अन्तिम स्तर से 20 से0 मी0 मोटे जमाव में मिलता है। इस स्तर के उपकरण परवर्ती उपकालों के लघुपाषाण उपकरणों की तुलना में बड़े हैं। इन उपकरणों में समतान्त पार्श्व वाले ब्लेड कुण्ठित पार्श्व वाले ब्लेड, खुरचनी तथा क्रोड और फलक है। ये उपकरण काफी बड़े है। जिससे ऐसा लगता है कि ये उसकाल के हैं जब उच्च पुरापाषाण काल और मध्य पाषाण काल का संक्रमण काल चल रहा था।

प्रारम्भिक मध्य पाषाण काल (अ) का द्योतन चापनीमाण्डो के नवें और आठवें स्तर से होता है। इसकाल के उपकरण अज्यामितीक तथा चर्ट पत्थर पर बने हैं। इन उपकरणों में बेधक, खुरचनी, कुण्ठित और समानान्तर पार्श्व वाले ब्लेड प्रमुख है। यह 40 से0 मी0 मोटा जमाव है। इसकाल के उपकरण अपेक्षकृत छोटे हैं और इनके निर्माण में चर्ट तथा चाल्सेडनी का प्रयोग किया गया है। इस स्तर से मिट्टी के उपकरणों का अभाव है। अनेक प्रकार के ज्यामितीय ब्लेड जिनमें त्रिभुज, चतुर्भुज आदि उल्लेखनीय है। इस उपकाल में पाँच गोलाकार झोपड़ियों के साक्ष्य मिले हैं। जिनका व्यास 3 मीटर है तथा इनके आस–पास बहुसंख्यक लघुपाषाण उपकरण तथा छोटे–छोटे पत्थरों के टुकड़े बिखरे हैं।

विकसित मध्य पाषाण काल अथवा आद्य नव पाषाणकाल तीसरे से लेकर प्रथम स्तर तक 40 से0 मी0 के मोटे जमाव में मिलता है। इस स्तर से ज्यामितीय लघु उपकरणों के साथ हस्त निर्मित मृद्भाण्ड मिले हैं। उपकरण प्रकारों में बेधक, चान्द्रिक, चतुर्भुज आदि नये हैं तथा कुछ पुराने उपकरण छोटे प्रारूप में मिले है। यहाँ पर 13 झोपड़ियों के आधार के विषय में जानकारी मिली हैं। जिनमें छः गोलाकार तथा शेष अण्डाकार हैं। इस उपकाल से हस्तनिर्मित मृद्भाण्ड मिले हैं जो अत्यन्त क्षत–विक्षत अवस्था में हैं। पकावट अच्छी नही है, इनके निर्माण में पुआल और भूँसी के प्रयोग की सूचना मिलती है। पात्र प्रकारों में कटोरे और कलश प्रमुख हैं। अनेक पात्र खण्डों पर ठप्पे के द्वारा डिजाइन बनाने के अवशेष मिले हैं। वर्तनों के चमकाने के भी साक्ष्य मिलते हैं।

निष्कर्ष

अध्ययन क्षेत्र (मध्य गंगा घाटी) ऊपरी और निम्न गंगा घाटी के बीच संक्रमण वाला प्रदेश है। यहाँ की सांस्कृतिक और आर्थिक प्रतिरूप ऊपरी गंगा घाटी एवं डेल्टा के बीच का है। न तो यहाँ बंगाल जैसी अधिक वर्षा और न पश्चिमी भाग जैसी शुष्कता ही पाई जाती है। औसत तापमान भी दोनों के मध्य ही पाया जाता है। लोगों के रहन–सहन, बोल–चाल की भाषा, खान–पान एवं मानव–समाज पर भी पूरब और पश्चिम दोनों का मिश्रित रूप परिलक्षित होता है। सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यह एक संक्रमण क्षेत्र है जहाँ पर बंगाल और ऊपरी गंगा घाटी के बीच की संस्कृति, खान–पान, वेश–भूषा एवं विचारधाराएं मिलती हैं। कृषि उत्पादन से भी संक्रमणता स्पष्ट होती है।

अनादि काल से यह राज्य भारत की संस्कृति–ज्ञान, शक्ति और संपदा का स्त्रोत रहा है । सदानीरा नदियाँ, घने जंगल, उर्वर भूमि और समृद्ध शांत मैदान इतिहास के अनगिनत अध्यायों को जन्म देते रहे हैं। उत्तर में उत्तुंग हिमालय, दक्षिण में बाबा विन्ध्य, पश्चिमी शैलजा–यमुना और पूरब में सदानीरा (गण्डकी) के बीच स्थित गंगा–यमुना के हरियाले घाटी वाले अध्ययन क्षेत्र की सांस्कृतिक/ऐतिहासिक धरोहरें निराली हैं।

यहाँ की कोमल ऊपजाऊ मिट्टी में प्राग–ऐतिहासिक ध्वंसावशेष दबकर नष्ट हो गए और खोदने वाले को शिव, विष्णु की कथा के प्रमाण नहीं मिले पर निश्चय ही प्राचीन भारतीय सभ्यता का जन्म इसी भागवत भूमि गंगा घाटी में हुआ। यह दोआब, सिंधु–नील–दजला–फरात और चीन की प्राचीन सभ्यताओं से घनिष्ठ रूप से जुड़ा था। काशी, मोहनजोदड़ों, उर, काबुल जिनके मेम्फिस से ज्यादा पुराना नगर है। यहाँ चीन से यात्री और रेशम के कीड़े आते, काशी–सिल्क बनता था। यह काशी, वीरों, यक्षों, अघोरियों की नगरी है। विष्णु काशी–शिव काशी बनी और शिव ने अविमुक्तेश्वर रूप धारण किया। प्रयाग तीरथराज कहलाया। काशी के उत्तर धर्मचक्र विहार मौर्य और गुप्त सम्राटों की कीर्ति का खंडहर था। भग्नचूड़ा, तृणजुल्मों में ढके हुए प्राचीर ईटों के ढेर में बिखरी हुई भारतीय शिल्प की विभूति ग्रीष्म रजनी की चन्द्रिका में अपने को शीतल कर रही थी। हम देखते हैं कि जहाँ पूर्व पाषाण कालीन मानव का जीवन पूर्णतः संचरणशील था वह मात्र कन्दमूल फल और जैविक आहार पर ही निर्भर था किन्तु अनःपुरापाषाण काल में मैदानी क्षेत्र के सम्पर्क में आने से घास के दानों की

जानकारी हुई और एकत्र करने या रखने के लिए उसे मृद्भाण्डों की आवश्यकता हुई जिसका वह निर्माण किया। धीरे–धीरे वह अपने रहन–सहन और उपकरण प्रकारों में नवीनता ला रहा था तथा साथ ही साथ अपने आवास को स्थायी रूप देने में प्रयत्नशील था। इन स्थलों के अतिरिक्त अनेक स्थल प्रकाश में आये हैं। जिसके उत्खनन से भविष्य में मध्य गंगा घाटी के सांस्कृतिक सम्बन्धों पर और विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला जा सकता है।

सन्दर्भ

1. लाल, बी0 बी0 1958, वीरभानपुर, ए माइक्रोलिथिक साइट इन द दामोदर वैली, वेस्ट बंगाल, एन्शिएण्ट इण्डिया नं0 14।
2. सिन्हा, अशोक कुमार, 2008, उत्तरी बिहार का पुरातत्त्व, (सीतामढ़ी और मुजफ्फरपुर जिलों के सन्दर्भ में), (प्रथम संस्करण), अभ्युदय प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 1–57
3. द्रष्टव्य – उत्तर प्रदेश 2003, सूचना और जनसम्पर्क विभाग, लखनऊ।
4. पूर्वोक्त।
5. सिंह, आर.एल., 1971, इण्डिया, ए रीजनल ज्योग्राफी, ज्योग्राफिकल सोसाइटी ऑफ इण्डिया, वाराणसी, पृ. 183–184
6. स्पेट, ओ. एच. के. एण्ड ए.एम. लीरमान्थ, 1960, इण्डिया एण्ड पाकिस्तान : ए जनरल एण्ड रीजनल जोग्रॉफी, लंदन, पृ. 564
7. सिंह, आर.एल., 1971, इण्डिया, ए रीजनल ज्योग्राफी, ज्योग्राफिकल सोसाइटी ऑफ इण्डिया, वाराणसी, पृ. 183–184
8. स्पेट, ओ. एच. के. एण्ड ए. एम. लीरमान्थ, 1960, इण्डिया एण्ड पाकिस्तान : ए जनरल एण्ड रीजनल जोग्रॉफी, लंदन, पृ. 564
9. मामोरिया, चतुर्भुज, जे. पी. मिश्रा, भारत का भूगोल, पूर्णतया संशोधित, संबर्द्धित एवं परिमार्जित संस्करण, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 331
10. मामोरिया, चतुर्भुज, जे. पी. मिश्रा, भारत का भूगोल, पूर्णतया संशोधित, संबर्द्धित एवं परिमार्जित संस्करण, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 331
11. वाडिया, डी. एन., 1953, जिआलॉजी ऑफ इण्डिया, लंदन, पृ. 391
12. ओल्डम, आर.डी., 1917, स्ट्रक्चर ऑफ हिमालयास एण्ड दि गंगेटिक प्लेन, मैम्बायर्स ऑफ दि जिलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, वाल्यूम टप्प्ए चैप्टर–11, कलकत्ता, पृ.82
13. शर्मा, जी.आर., 1975, सीजनल माइग्रेशन्स एण्ड मेसोलिथिक लेक कल्चर्स ऑफ दि गंगा वैली, के. सी. चट्टोपाध्याय मेमोरियल, वाल्यूम, पृ. 5–6
14. संदर्भ/स्त्रोत– गंगा के मैदानी क्षेत्र में भी तेल व प्राकृतिक गैस की संभावना, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र 'हिन्दुस्तान', वाराणसी/लखनऊ, मंगलवार, 05 दिसम्बर, 2006, पृ. 7
15. सिंह, उजागिर, 1978, भारत का आर्थिक एवं प्रादेशिक भूगोल, (प्रथम संस्करण), उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृ. 562
16. स्कालिया, एच0 डी0 1965, एक्सकवेशन एट लंघनाजः 1944–63, पार्ट 1, आर्कियोलॉजी, डेकन कालेज, पूना।
17. मिश्र, वी0 एन0 1973, बागोरः ए लेट मेसोलिथिक सेटेलमेंट इन नार्थ वेस्ट इण्डिया, वर्ल्ड आर्कियोलॉजी, वाल्यूम 1, पेज 92–110।
18. पाल, जे0 एन0 1984, इपी–पैलियोलिथिक साइट्स इन प्रतापगढ़ डिस्ट्रिक, उत्तर प्रदेश, मैन एण्ड इनवार्यनमेंट, वाल्यूम 8, पेज 37–38।
19. पंत, डी0 डी0 और पंत, रेखा 1980, प्रिलिमिनरी आबजरवेशन आन पोलेन फ्लोरा आफ चोपनी माण्डो (विन्ध्याज) एण्ड महदहा (गंगा वैली)।
20. शर्मा, जी0 आर0, मिश्रा, वी0 डी0 मण्डल, डी0, मिश्रा बी0 बी0 और, जे0 एन0 पाल 1980, बिगनिंग्स ऑफ एग्रीकल्चर, इलाहाबाद, पेज 229–230।
21. पाण्डेय, जे0 एन0 1985, सेटेलमेंट पैटर्न एण्ड लाइफ इन द मैसोलिथिक पीरिएड इन यू0 पी0, अप्रकाशित डी0 फिल्0 शोध प्रबन्ध, इ0वि0वि0, इलाहाबाद।
22. सिंह, उजागिर, 1978, भारत का आर्थिक एवं प्रादेशिक भूगोल, (प्रथम संस्करण), उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृ. 562
23. मामोरिया, चतुर्भुज एवं जे. पी. मिश्रा, भारत का भूगोल, पूर्णतः संशोधित, सवर्द्धित एवं परिमार्जित संस्करण, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ. 332